International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(1): 186-189

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(1): 186-189
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 01-11-2016
Accepted: 07-12-2016

शालिनी सक्सेना
प्रोफेसर भाषाविज्ञान, राजकीय महाराज आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत

Correspondence
शालिनी सक्सेना
प्रोफेसर भाषाविज्ञान, राजकीय महाराज आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, जयपुर, राजस्थान, भारत

पुनर्जन्म एवं मनुस्मृति

शालिनी सक्सेना

सारांश
भारतीय संस्कृति आत्मा की नित्यता को स्वीकार करती हैं। आत्मा नित्य है और वह एक शरीर से दूसरे शरीर को ग्रहण करती है। मृत्यु केवल शरीर की होती है। भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं श्रीमद्भगवद् गीता में यही कहते हैं। भारतीय धर्मशास्त्रकार भी पुनर्जन्म का समर्थन करते हैं। स्वर्ग, नरक और पुनर्जन्म के सिद्धान्त भारतीय संस्कृति का अनुपम वैशिष्ट्य है। पुनर्जन्म में आस्था ही मनुष्य को श्रेष्ठ कर्म करने हेतु प्रेरित करती है और निन्दित कर्म से विमुख करती है। मनु ने मनुस्मृति में अनेकानेक स्थलों पर पुनर्जन्म एवं कर्मविशेष से प्राप्त होने वाली नाना योनियों का उल्लेख किया है। इस शोधालेख में मनु के द्वारा प्रतिपादित पुनर्जन्म की अवधारणा की विवेचना की गई है।

कूटशब्दः पुनर्जन्म, तिर्यग्योनि, गतियां, विहित कर्म

प्रस्तावना
वैदिक वाङ्मय के विशाल महासागर में वैदिक संहिताओं के अतिरिक्त ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् ही नहीं वेदांग भी सम्मिलित हैं। इनके अतिरिक्त भी परवर्ती सम्पूर्ण संस्कृत वाङ्मय पर वैदिक साहित्य का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। स्मृतियां तो वेदांग साहित्य में समाहित होने के कारण वेद का अंगभूत ही हैं और भारतीय समाज एवं संस्कृति में उनको उतना ही सम्मान प्राप्त है जितना वेद को। प्राचीनकाल में धर्म सम्बन्धी धारणा बड़ी व्यापक थी। धर्म किसी सम्प्रदाय या मत का द्योतक नहीं है, प्रत्युत यह जीवन का एक ढ़ंग या आचार संहिता है, जो समाज के किसी अंग एवं व्यक्ति के रूप में मनुष्य के कर्मों एवं कृत्यों को व्यवस्थापित करती है तथा उसे मानवीय अस्तित्व के लक्ष्य तक पहुँचने के योग्य बनाती है। श्रौत एवं स्मार्त धर्म में श्रौत धर्म वैदिक संहिताओं में वर्णित है तो स्मार्त धर्म में वर्णाश्रम से सम्बन्धित धर्म है। अन्यत्र धर्म के छः प्रकार बताएं हैं– वर्णधर्म, आश्रमधर्म, वर्णाश्रमधर्म, गुणधर्म, नैमित्तिक धर्म एवं साधारण धर्म।
स्मृति साहित्य में मनुस्मृति जिसे मानवधर्मशास्त्र भी कहा जाता है। मनुष्य मात्र के जीवन को सुसंस्कृत करने एवं व्यवस्थित जीवनयापन करने हेतु मार्गदर्शक की भूमिका धर्मशास्त्र द्वारा ही सम्पन्न होती है। स्मृतियों में आचारशास्त्र का विस्तृत विवेचन किया गया है। ऋग्वेद में ऋत् की उद्भावना उदात्त एवं उत्कृष्ट आचारशास्त्र की ही भावना है। उसी में धर्म के नियमों का समावेश है। ''सत्यं वद, धर्मं चर'' के आदर्श के पीछे उदात्त आचार मीमांसा ही है। ''असतो मा सद्गमय'' ''तमसो मा ज्योतिर्गमय'' ''मृत्योर्माऽमृत गमय'' भी भारतीय स्मार्त धर्म अथवा आचार मीमांसा के उदात्त स्वरूप को प्रदर्शित करते हैं। मनु ने मानवधर्म का उपदेश करते हुए कहा है कि वही करो जो तुम्हारी अन्तरात्मा को शान्ति दें। उन्होंने पुनः कहा है न माता पिता न पत्नी न लड़के (सन्तान) उस संसार (परलोक) में साथी होंगे केवल सदाचार ही साथ देगा। उनके अनुसार परलोक को संवारने के लिए सदाचारी एवं अनुशासित जीवन एवं धर्माचरण आवश्यक है। ईश्वर एवं अन्तरात्मा पापकर्म के साक्षी होते हैं।[1] मनु के अनुसार उच्चतर जीवन के लिए तन और मन दोनों का अनुशासित होना परम आवश्यक है।
अध्यात्मवादी भारतीय संस्कृति में आत्मा को नित्य, अजन्मा, अविनाशी माना गया है। पाप और पुण्य की अवधारणा के साथ स्वर्ग–नरक की अवधारणा भी भारतीय संस्कृति की अद्भुत देन है। भारतीय संस्कृति की यह अवधारणा मनुष्य मात्र को सत्कर्म के लिए प्रेरित करती है। मनुस्मृति में कहा गया है कि वेदविहित कर्म करने से स्वर्ग मिलता है और निषिद्ध कर्मों के अनुष्ठान से मनुष्य पाप का भागी होता है और नाना प्रकार के नरक का भोग करता है। एक स्थान पर कहा गया है कि हत्या के दोषी को मृत्युदण्ड देना चाहिए ताकि उसे अपने अगले जन्म में इस महापातक का फल न भोगना पड़े। नित्य, नैमित्तिक एवं काम्य कर्मों की सरणि में इस लोक एवं परलोक में इच्छापूर्वक किया गया कर्म 'प्रवृत्त' कर्म कहा जाता है और इच्छारहित अर्थात् निष्काम भाव से ब्रह्मज्ञान के अभ्यासपूर्वक किया गया

कर्म निवृत्त कर्म कहा जाता है। यथा मनु–

इह चामुत्र वा काम्यं प्रवृत्तं कर्म कीर्त्यते।
निष्कामं ज्ञानपूर्वं तु निवृत्तमुपदिश्यते।।[2]

वेदान्त दर्शन के अनुसार जीवन्मुक्त के कर्म इसीलिए फलदायी नहीं होते क्योंकि वे निष्काम भाव से किए गए हैं और निवृत्ति के हेतु हैं। आत्मसंयमी सदैव अनन्त सुख का भागी होता है। जिसने सब कुछ जीत लिया वह परमानन्द का अनुभव करता है। दुःख दूसरे लोगों के अधीन है और आनन्द स्वयं के अधीन है। जिस आचरण से अशुभ जन्म की प्रवृत्ति होती है, वह दुराचार है और यह भी काम्य कर्म के समान पुनर्जन्म का हेतु बनता है।

मनु के अनुसार सही और गलत अथवा करणीय अकरणीय के निर्धारण करने के चार माध्यम हैंः– वेद, स्मृति, सदाचार और स्वविवेक। इनमें प्रथम तीन सामाजिक व्यवस्था बनाने में सहायक हैं तो अन्तिम सामाजिक व्यवस्था, प्रगति एवं आत्महित का हेतु है। मनुष्य को वही आचरण करना चाहिए जो उसके मन को अच्छा लगता है। नैतिक आचरण में सत्त्वगुण की प्रधानता होती है और वह मानवमात्र के उन्नयन का मार्ग प्रशस्त करता है। कहा भी गया है– ''मनःपूतं समाचरेत्।'' मनुष्य की इच्छा, राग और द्वेष ही उसे स्वर्ग नरक के चक्र में बाँधते हैं। मनु के अनुसार कर्मफल की इच्छा करना श्रेष्ठ नहीं है किन्तु इच्छा का अभाव भी नहीं होता क्योंकि वेदज्ञान और वेदोक्त कर्म भी इच्छा से ही होते हैं। इच्छा संकल्पमूलक है और यज्ञ संकल्प से ही होते हैं इस संसार में बिना इच्छा के मनुष्य का कोई कर्म नहीं होता–

अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित्।
यद्यद्धि कुरुते किंचित्तत्तत्कामस्य चेष्टितम्।।[3]

शास्त्रोक्त कर्मों में अच्छी प्रकार से नियत मनुष्य मोक्ष को प्राप्त करता है और इस संसार में इच्छानुसार सब कर्मों को प्राप्त करता है। यदि तृष्णा से नष्ट बुद्धि वाला ईप्सित विषयों के लिए अवैधानिक अर्थात् यथेच्छ आचरण करता है, तो वह नरक जाता है, और उसे ईप्सित फल भी नहीं मिलता है। काम्य कर्म यथाविधि करने से कल्याण होता है, अन्यथा नहीं। जन्म मृत्यु का कारण इच्छा ही है और इच्छा का शमन कभी भोग द्वारा सम्भव नहीं है अपितु कामनाओं के भोग से वे वृद्धि को ही प्राप्त होती हैं अतः संयम ही इनके शमन का एकमात्र आधार है। ज्ञान के माध्यम से ही मृत्यु को जीता जा सकता है और उसी के माध्यम से पुनर्जन्म के बन्धन से छूटकारा सम्भव है। इसीलिए वेदज्ञान दाता गुरु की महिमा अतुलनीय कही गई है। जन्मदाता पिता और ब्रह्मज्ञानोपदेशक पिता में ब्रह्मज्ञानदाता आचार्य को श्रेष्ठ कहा गया है।[4] गुरुनिन्दा को अपराध माना गया है और कहा गया है कि गुरु के दोषों का कथन करने वाला अन्य जन्म में गधा बनता है जो झूठ ही निदा करता है वह कुत्ता, जो गुरु के धन का भोग करता है वह कीड़ा और गुरु से ईर्ष्या करने वाला कीट बनता है। इस प्रकार मनु ने पुनर्जन्म को स्वीकार किया है। माता, पिता और गुरु की सेवा एवं सम्मान ब्रह्मलोक की प्राप्ति का हेतु बनता है। माता की भक्ति से मृत्युलोक, पिता की भक्ति से अन्तरिक्ष लोक और गुरु की भक्ति से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है। जो विप्र आचार्य की मृत्यु उपरान्त भी गुरु पुत्रादि से लेकर अग्नि तक की शुश्रूषा करने का अखण्डित व्रत धारण करता है वह उत्तम पद को प्राप्त करता है और फिर इस संसार में जन्म नहीं लेताः–

एवं चरति यो विप्रो ब्रह्मचर्यविप्लुतः।
स गच्छत्युत्तमस्थानं न चेहाजायते पुनः।।[5]

जो बुद्धिहीन गृहस्थ आतिथ्य के लोभ से दूसरे ग्राम जाकर परान्न भोजन करता है उस परान्न भोजन के कारण वह मृत्यु के बाद उस अन्न देने वाले के यहाँ पशुरूप में पुनर्जन्म लेता हैः–

उपासते ये गृहस्थाः परपाकमबुद्धयः।
तेन ते प्रेत्य पशुतां व्रजन्त्यन्नादिदायिनाम्।।[6]

मनु ने ब्राह्मणों एवं गृहस्थों के लिए कठोर एवं सात्विक जीवनचर्या का विधान किया है। उसका उल्लंघन उसे पाप का भागी बनाता है और इस पाप के प्रभाव से वह पुनर्जन्म के चक्र में आबद्ध हो जाता है। गृहस्थ के लिए देव एवं पितृकार्यों का निरन्तर अनुष्ठान आवश्यक कहा गया है। यहाँ तक कि देवकर्म एवं पितृकर्म में विधिवत् निमन्त्रित ब्राह्मण यदि किसी कारण से निमन्त्रण उपरान्त भी भोजन ग्रहण नहीं करता तो उस पाप से अगले जन्म में वह सूकर बनता है।[7] वेदाभ्यास एवं गायत्री का जप करने वाले मनुष्य को अपने पूर्वजन्म की बातों का स्मरण रहता है। और पूर्वजन्म का स्मरण करता हुआ जब वह ब्रह्म प्राप्ति का अभ्यास करता है तो पुनर्जन्म के चक्र से छूटकारा प्राप्त कर लेता है।[8] जो मनुष्य ब्राह्मण को पीड़ित करता है वह इक्कीस जन्म तक कुत्ता बिल्ली आदि पापयोनियों में उत्पन्न होता है। ब्राह्मण का रक्त बहाने वाला उतने वर्षों तक दूसरे जीवों का खाद्य बनता है जितनी धूल में उसके रक्त कण गिरते हैं। मनु ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि कोई व्यक्ति छद्म रूप से सन्यासी अथवा ब्रह्मचारी आदि के चिह्न धारण कर उनकी वृत्ति से जीवनयापन करता है तो वह मृत्यु उपरान्त तिर्यग्योनि में जन्म लेता है।[9]

दान के प्रसंग में मनु ने पुनर्जन्म के सिद्धान्त का समर्थन करते हुए लिखा है कि जिस जिस अभिलाषा से जिस जिस वस्तु का दान देते हैं उसी उसी भाव से पूजित होता हुआ उन उन वस्तुओं को जन्मान्तर में प्राप्त करता है। यथा–

येन येन तु भावेन यद्यद्दानं प्रयच्छति।
तत्तत्तेनैव भावेन प्राप्नोति प्रतिपूजितः।।[10]

मांसभक्षण के सम्बन्ध में निषेध का उल्लेख करते हुए मनु ने कहा है कि द्विज को बिना आपत्तिकाल मांसभक्षण नहीं करना चाहिए क्योंकि विधिरहित मांस खाने वाला मरकर अगले जन्म में उन जीवों द्वारा खाया जाता है। धन के लिए पशुवध करने वाले को उतना पाप नहीं लगता जितना मांसभक्षण करने वाले को होता है लेकिन जिन के यहाँ श्राद्धकर्म अथवा मधुपर्क में मांसभक्षण विहित है। उनके यहाँ शास्त्रानुसार निमन्त्रित भी मांसभक्षण से मना करता है तो मृत्यु उपरान्त वो इक्कीस बार पशुयोनि में पुनर्जन्म ग्रहण करता है। वृथा पशुहिंसा करने वाले को पशु के शरीर के रोम जितने वर्ष तक पुनः जन्म प्राप्त कर उस पशु के द्वारा मारा जाता है।[11] यज्ञ के लिए नाश को प्राप्त औषधि, पशु, वृक्ष, तिर्यक् और पक्षी फिर उत्तम योनि को प्राप्त करते हैं। श्रेष्ठ कर्म के लिए पशु हिंसा करने वाला स्वयं पशु के साथ उत्तम गति को प्राप्त करता है। मांस शब्द की निरुक्ति की व्याख्या करते हुए मनु ने कहा है कि मैं जिसके मांस को इस जन्म में खाता हूँ परलोक में वह मेरे मांस को खायेगा विद्वान् यही मांस शब्द का निर्वचन कहते हैं।[12] व्यभिचार प्रकरण में स्त्रियों के विषय में मनु ने कहा है कि परपुरुष के साथ व्यभिचार करती हुई स्त्री अगले जन्म में श्रृगाल योनि को प्राप्त करती है तथा पाप एवं रोगों से पीड़ित रहती है। मनु का कथन है कि मनुष्य को शास्त्रोक्त कर्मों का सेवन करना चाहिए और निषिद्ध कर्मों का त्याग करना चाहिए। शास्त्र विहित कर्मों का त्याग करने वाला और निन्दित कर्मों का आचरण करने वाला मनुष्य हजारों तिर्यग्योनियों में जन्म लेता है और जन्म मरण के चक्र में पड़कर पीड़ित होता है। इसलिए धर्म का आचरण करते हुए ब्रह्मप्राप्ति का प्रयास करना चाहिए।

अधर्मप्रभवं चैव दुःखयोगं शरीरिणाम्।
धर्मार्थप्रभवं चैव सुखसंयोगमक्षयम्।।[13]

मनुष्य की सामान्य गति तो विभिन्न योनियों में गमन करना है। इस दुर्ज्ञेय गति का अनुभव परमात्मज्ञानी को ही होता है। जिसे ब्रह्मज्ञान हो जाता है उसे कर्मफल आबद्ध नहीं करते। ब्रह्मज्ञान से रहित मनुष्य को ही संसार में पुनः पुनः जन्म लेना पड़ता है। यथा दर्शनेन विहीनस्तु संसारं प्रतिपद्यते।।[14]

राजधर्म प्रकरण में व्यसनों का उल्लेख करते हुए मनु ने कहा है कि व्यसन तो मृत्यु से भी कष्ट कारक हैं क्योंकि मृतक व्यसनी पुरुष क्रमशः एक के बाद एक नरक में जाता है। श्रद्धापूर्वक सुपात्र को दिया गया दान परलोक में मनुष्य को प्राप्त होता है। यदि राजा के सैनिक डरकर युद्ध भूमि से पीठ दिखाकर भाग जाते हैं तो उनका सम्पूर्ण पुण्य राजा को प्राप्त होता है। मनु के अनुसार इस संसार में जो कुछ कार्य हैं वे सब भाग्य तथा मनुष्य के अधीन हैं। उनमें दैव अर्थात् पूर्वजन्मकृत कार्य अचिन्त्य हैं।[15] व्यवहार प्रकरण में मनु ने कहा है कि असत्य साक्ष्य देने वाला वरुण के पाश में बांधा जाता है और जलोदर रोग से ग्रस्त होकर सौ जन्म तक पीड़ित रहता है। यथा

साक्ष्येऽनृतं वदन्पाशैर्बध्यते वारुणैभृशम्।
विवशः शतमाजातीस्तस्मात्साक्ष्यं वदेदृतम्।।[16]

अकारण असत्य शपथ लेने वाला परलोक तथा इस लोक में नष्ट होता है। जीविका निर्वाह के सन्दर्भ में तिल से जीविका कमाने वाले के लिए मनु ने कहा है कि जो तिल खाने, उबटन करने अथवा दान देने के अतिरिक्त कार्यों में उपयोग लेता है अर्थात् उनका विक्रय करता है अथवा तेल निकालता है वह पितरों के साथ कीड़ा बनकर कुत्ते की विष्ठा में गिरता है। अर्थात् ऐसा मनुष्य अपने पितरों को भी जन्म मरण के चक्र में डालकर स्वयं भी निकृष्ट कीट योनि को प्राप्त करता है। ब्राह्मण यदि यज्ञ के लिए शूद्र से धन मांगता है तो मरकर पुनर्जन्म में चाण्डाल योनि को प्राप्त करता है। जो यज्ञ के लिए प्राप्त धन को दान नहीं करता वह सौ वर्षों तक कौए की योनि को प्राप्त करता है। जो मनुष्य लोभ से देवता या ब्राह्मण के धन को लेता है वह पुनर्जन्म में गीध का झूठा भोजन करता है। मनु का कथन है कि कुछ लोग इस जन्म के दुराचरण से तो कुछ लोग पूर्वजन्म के दुराचरण से कुरुपता को प्राप्त करते हैं। मनु ने कार्यविशेष के करने से अगले जन्म में क्या फल मिलता है इसका विस्तार से विवेचन किया है। सोने को चुराने वाला कुनखी, मद्यपानकर्ता काले दाँतों वाला, ब्राह्मण का हत्यारा क्षयरोगी, गुरुपत्नी से गमन करने वाला दुश्चर्मरोगी, धान्य का चोर अंगहीन, गुरु के बिना पढ़ाऐ पढ़ने वाला मूक, कपड़े का चोर श्वेतकुष्ठी, घोड़े का चोर लगड़ा, दीपक चुराने वाला अन्धा, दीपक बुझाने वाला काना, होता है ऐसा मनु का कथन है। मनु की यह अवधारणा उनके पुनर्जन्म में विश्वास को दृढ़ करती है। पाप का शमन प्रायश्चित्त द्वारा होता है अतः प्रायश्चित्त करने से ऐसे दुष्कर्मफलों से किंचित् छूटकारा सम्भव है।

मनुष्य शारीरिक कर्मदोषों से स्थावर योनि को वाचिक कर्मदोषों से पक्षी, मृग योनि को मानसिक कर्मदोष से अन्त्य योनि को प्राप्त होते हैं।यथा–

शरीरजैः कर्मदोषैर्याति स्थावरतां नरः।
वाचिकैः पक्षिरमृगतरं मानसैरन्त्यजातिताम्।।[17]

मनु ने विभिन्न योनियों का उल्लेख करते हुए कहा है कि स्थावर, कृमि, कीट, मछली, सर्प, कछुआ, पशु, मृग ये सब जघन्य तामसी गतियां हैं। हाथी, घोड़ा, शूद्र, निन्दित म्लेच्छ, सिंह, बाघ और सूअर ये मध्यम तामसी योनियां है। चारण, सुपर्ण, कपटाचारी मनुष्य, राक्षस और पिशाच ये उत्तम तामसी गतियां है। झल्ल, मल्ल, नट, शस्त्रजीवी, जुआरी तथा मद्यपी पुरुष ये जघन्य राजसी गतियां है। राजा, क्षत्रिय, राजाओं के पुरोहित, शास्त्रार्थ आदि के विवाद को पसन्द करने वाले ये सब मध्यम राजसी गतियां है। गन्धर्व, गुह्यक, यक्ष, देवानुचर और अप्साराएं ये सब उत्तम राजसी गतियां है। तपस्वी, यति, ब्राह्मण, वैमानिक गण, नक्षत्र और दैत्य ये जघन्य सात्विक योनियां हैं। यज्वा, ऋषि, देव, वेद, ज्योति, वर्ष और साध्य ये मध्य सात्त्विकी गतियां है। ब्रह्मा, विश्वस्रष्टा, धर्म, महान्, अव्यक्त इनको उत्तम सात्त्विक गतियां कहा गया है।[18]

ब्रह्मघाती मनुष्य कुत्ता, सूकर, गधा, ऊँट, गौ, बकरी, भेड़, मृग, पक्षी, चाण्डाल योनि को प्राप्त करता है। सुरापान करने वाला कृमि, कीट, पतंग, विष्ठा खाने वाला कौआ आदि, हिंसक बाघ आदि योनियों को प्राप्त करता है। सोने की चोरी करने वाला मकड़ी, साँप, गिरगिट, जलचर, हिंसक जीव अथवा प्रेत योनियों को हजार बार प्राप्त करता है।

गुरुतल्पग तृण, गुल्म, लता, गीध, बाघ आदि, योनियों को सैकडों बार प्राप्त करता है। हिंसक मनुष्य कच्चे मांस का भक्षण करने वाले बिलाव, अभक्ष्य पदार्थों को खाने वाले मनुष्य कृमि होते हैं, चोर परस्पर में एक दूसरे को खाने वाले होते हैं और चाण्डाल आदि हीनतम जातियों की स्त्रियों के साथ व्यभिचार करने वाले प्रेत होते हैं। पतितों के साथ संसर्ग करने वाले, परस्त्री के साथ संसर्ग करने वाले और ब्राह्मण के धन का अपहरण कर ने वाले मनुष्य ब्रह्मराक्षस होते हैं। मणि, मोती, मूंगा और अनेक प्रकार के रत्नों को लाभ से चुराने वाला सुनार की योनि में उत्पन्न होता है। धान्य चुराकर चुहा, कांसा चुराकर हंस, जल चुराने वाला प्लव, शहद चुराकर दंश, दूध चुराकर कौवा, गन्ने आदि का रस चुराकर कुत्ता और घी चुराकर नेवला होता है। मांस चुराकर गीध, नमक चुराकर झींगुर होता है। रेशमी वस्त्र चुराकर तीतर, वस्त्र चुराकर मेंढ़क, सूतीवस्त्र चुराकर क्रौंच गाय चुराकर गोह उत्तम गन्ध चुराकर छुछुन्दर, पत्तों वाला शाक चुराकर मोर, सिद्धान्न चुराकर शाही पशु, अग्नि चुराकर बगुला, मृग चुराकर भेड़िया, घोड़ा चुराकर बाघ, फल तथा मूल चुराकर वानर, स्त्री चुराकर भालू पानी चुराकर चातक, सवारी चुराकर ऊँट, पशुओं को चुराकर बकरी बनता है। दूसरे के बेकार भी सामान चुराकर तथा बिना हवन किए हविष्य को खाकर तिर्यक्योनि में उत्पन्न होता है। इसी प्रकार स्त्रियां भी इच्छापूर्वक इन वस्तुओं को चुराकर दोषगामिनी होती है और पुनर्जन्म में इन्हीं जीवों की स्त्रियां होती हैं।

शास्त्र विहित कर्मों को न करने पर भी पुनर्जन्म में मनुष्य नाना योनियों को प्राप्त करता है।[19] सभी वर्णों के लोग बिना आपत्ति अपने अपने कर्मों से भ्रष्ट होकर निन्दित योनियों को पाकर जन्मान्तर में शत्रुओं के यहाँ दास होते हैं। अपने धर्म से भ्रष्ट ब्राह्मण वमन किए हुए अन्नादि को खाने वाला तथा ज्वालायुक्त मुख वाला प्रेत होता हैं। क्षत्रिय अपतित तथा शव को खाने वाला कटपूतन नामक प्रेत होता है। अपने कर्म से भ्रष्ट हुआ वैश्य पीव खाने वाला मैत्राक्षज्योतिष्क नामक प्रेत और अपने धर्म से भ्रष्ट शूद्र चैलापक नामक प्रेत होता है। विषयी मनुष्य जैसे जैसे विषयों का सेवन करते हैं। उन उन विषयों में वैसे वैसे आसक्ति होती है वे मन्दबुद्धि उन पाप कर्मों के अभ्यास से उन उन योनियों में दुःखों को प्राप्त करते हैं। वे निषिद्ध योनियों में उत्पन्न होते हैं। अनेक बार गर्भ में निवास करते हैं। जन्म लेते हैं और कष्टकारक बन्धनों को प्राप्त कर दूसरों के दास बनते हैं। श्रेष्ठ कर्म मनुष्य को देवत्व प्रदान करते हैं और निन्दित कर्म से वह राक्षसत्व अथवा प्रेतत्व प्राप्त करता है। अन्ततः मनु ने कहा है कि मनुष्य जिस जिस प्रकार के भावों से जिस जिस प्रकार के कर्मों का सेवन करता है वह वैसे वैसे भले बुरे शरीर से उन कर्मफलों को प्राप्त करता है। यथा–

यादृशेन तु भावेन यद्यत्कर्म निषेवते।
तादृशेन शरीरेण तत्तत्फलमुपाश्नुते।।[20]

वस्तुतः पुनर्जन्म की अवधारणा मनुष्य को सद्कर्म की ओर प्रेरित करती है। यही सद्कर्म एक श्रेष्ठ समाज एवं एक श्रेष्ठ आचार सरणि के हेतु हैं। मनु मनुस्मृति में विभिन्न प्रकरणों में पुनर्जन्म का समर्थन करते दिखाई देते हैं। मनुष्य के श्रेष्ठ कर्म श्रेष्ठ योनि में

जन्म के हेतु बनते हैं तो निन्दित कर्म से निन्दित योनियों की प्राप्ति कही गई है। मनु के अनुसार ब्रह्मज्ञानी परमात्मवेत्ता जन्म मरण के चक्र से निवृत्त हो जाता हैं उसे पुनर्जन्म के बन्ध से छूटकारा मिल जाता है।

त्मभितमदबमे

1. मनुस्मृति 4/239, 8/85
2. मनुस्मृति 12/89
3. मनुस्मृति 2/4
4. मनुस्मृति 2/146
5. मनुस्मृति 2/249
6. मनुस्मृति 3/104
7. मनुस्मृति 3/190
8. मनुस्मृति 4/148,149
9. मनुस्मृति 4/200
10. मनुस्मृति 4/234
11. मनुस्मृति 5/38
12. मनुस्मृति 5/55
13. मनुस्मृति 6/64
14. मनुस्मृति 7/74
15. मनुस्मृति 7/205
16. मनुस्मृति 8/82
17. मनुस्मृति 12/9
18. मनुस्मृति 12/42–51
19. मनुस्मृति 12/70
20. मनुस्मृति 12/81